दैनिक जागरण

Date:19-10-21

भारतीय चिंतन का ताना-बाना है स्वावलंबन

डॉ० विजय अग्रवाल, (आध्यात्मिक विषयों के लेखक और वक्ता)

वर्तमान में आमतौर पर 'स्वावलंबन' को किसी राष्ट्र की पूर्णतः आर्थिक आत्म निर्भरता से जोड़कर समझा जाता है। किन्तु भारतीय चिंतन में यह अत्यंत व्यापक, गहरे एवं अनेकांगी रूप में आरंभ से ही मौजूद रहा है। चिंतन के आरम्भ से ही इसके केन्द्र में उसकी मूल चिन्ता इस बात की रही है कि कैसे व्यक्ति को स्वावलम्बी बनाया जाये। यदि ऐसा हो सका, तो स्वावलम्बी नागरिकों से निर्मित समाज और राष्ट्र बिना किसी अन्य प्रयास के स्वयं ही स्वावलम्बी बन जायेगा।

यदि ध्यान से देखें, तो हम पाते है कि स्वावलंबन की यह चेतना हमारे 'अध्यात्म' चिंतन के केंद्र में रही है |इसके लिए हमारे दार्शनिकों ने दो मूलभूत उपाय किये। पहला यह कि उसने व्यक्ति में ही ब्रह्माण्ड की कल्पना की। उसने व्यक्ति को समुद्र में बूंद न मानकर बूंद में ही समुद्र की समग्रता की बात कही।दूसरे यह कि हमारे ऋषि-मुनि इस मनोवैज्ञानिक तथ्य से भलिभांति परिचित थे कि यदि व्यक्ति की इस आदिम चेतना को ब्रह्माण्ड तक विस्तृत करना है, तो इसके लिए उसे मानसिक स्वतंत्रता प्रदान करनी होगी, ताकि वह अनंत ऊँचाई तक की निर्बाध यात्रा कर सके।

आरम्भ में धर्म ही सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था के नीतिशास्त्र एवं संविधान हुआ करता था। फलस्वरूप भारत ने अपने यहाँ जो धार्मिक स्वतंत्रता दी, वह विश्व के किसी भी अन्य धार्मिक पद्धति में दिखाई नहीं देती। छूट दी गई कि व्यक्ति अपने-अपने देवी-देवता बना ले। ग्राम अपने देवता की आराधना कर लें। यह सब अद्भुत था। यह धर्म के लोकतांत्रिकीकरण की इकलौती मिसाल है।

इन दोनों व्यवस्थाओं के फलस्वरूप ऋगवेद ने 'अहं ब्रहमास्मि' का उद्घोष किया। यदि इस जगत का निर्माण करने वाला ब्रहम है, और यदि व्यक्ति स्वयं ब्रहम है, तो इससे व्यक्ति की क्षमता के बारे में कोई सन्देह नहीं रह जाता। गीता में तो कृष्ण साफ-साफ कहते हैं 'पौरुष नृषु', यानी कि मैं मनुष्यों में सामर्थ्य हूँ। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि वे अर्जुन को बताते हैं कि मैं हाथी में ऐरावत हूँ, ऋतुओं में बसंत हूँ, आदि-आदि। लेकिन जब मनुष्यों में श्रेष्ठतम की बारी आती है, तब

वे किसी श्रेष्ठ मनुष्य का नाम नहीं लेते। वे 'सामर्थ्य' की बात करते हैं। इस पृथ्वी का प्रत्येक व्यक्ति सामर्थ्य के इस विलक्षण, सर्वोत्तम दैवीय गुण से युक्त है। यहाँ संकेत स्पष्ट है कि व्यक्ति को किसी अन्य पर अवलम्बित होने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वह अपने हर वांच्छित फल को प्राप्त करने का सामर्थ्य रखता है।

कृष्ण ने जिसे 'सामर्थ्य' कहा है, हमारे वेदों एवं उपनिषदों में यही ब्रहम की रचनात्मक शक्ति है, जो विश्व की रचना करने में समर्थ है। छान्दोग्य उपनिषद में उद्दालक अपने पुत्र श्वेतकेतु से कहते हैं, "जिस किसी ने अपनी आत्मा को जान लिया, उसने ब्रह्माण्ड की आत्मा को, ब्रहम को भी जान लिया।" यानी कि आत्मा ही ब्रहम है। 'जान लिया' कहने का तात्पर्य है कि 'ज्ञान हो गया'। अर्थात 'सामर्थ्य' का आभास होना, ताकि उसे परावलम्बित होना न पड़े। 'बृहदारण्यक' उपनिषद में इसी तथ्य को इस रूप में रेखांकित किया गया है कि "जो यह जान लेता है कि 'मैं ही ब्रहम हूँ,' स्वयं वही बन जाता है।"

हमारे प्राचीन समाज व्यवस्थापकों ने मनुष्य के लिए जिन चार आश्रमों की व्यवस्था की थी, उसके अंतिम दो चरण वानप्रस्थ एवं सन्यास यह कहते जान पड़ते हैं कि "छोड़ो-छाड़ो और जाओ। घर का मोह छोडो। धन को त्यागो"। यह संचयन के त्याग की व्यवस्था है, जिसे जैन दर्शन में 'अपरिग्रह' कहा गया है। यह इच्छाओं को नियंत्रित करने का सर्वोत्तम उपाय है। और इच्छाओं पर जिसका जितना नियंत्रण होगा, वह उतना ही अधिक स्व पर अवलम्बित होगा। पतंजलि की दृष्टि में यही योग है - "चित्तवृत्ति निरोधः योगः।" 'मनुस्मृति' में भी धर्म के जो दस लक्षण गिनायें गये हैं, उनमें तीसरी प्राथमिकता 'इन्द्रियनिग्रह' को दी गई है।

भक्तिकाल के कवियों एवं विचारकों ने इसे जीवन की सरलता और सहजता की पृष्ठभूमि के रूप में स्वीकारते हुए कहा, 'सांई इतना दीजिये जामे कुटुम्ब समाये।' तुलसीदास ने रथधन, गजधन, गोधन और रत्नधन आदि को यह कहकर तिरस्कृत कर दिया कि 'जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान।' यदि मनुष्य सौ वर्ष तक जीने की इच्छा रखता है, तो क्या वह अपने परिवार पर निर्भर रहकर ऐसा करेगा? नहीं। 'इशावस्य' उपनिषद में स्पष्ट रूप से ऐसे व्यक्ति की स्वावलम्बन की यह साहसिक भावना इन शब्दों में मुखर हुई है कि 'मनुष्य कर्म करता हुआ सौ वर्ष तक जिये। ध्यान दीजिये - 'कर्म करता हुआ।'
'

हमारे यहाँ राम और कृष्ण कर्म करते हैं। राजा (जनक) हल चलाते हैं। ऋषि सत्यकाम गौ चराते हैं। मुनि अगस्त्य ऋग्वेद में भूमि खोदते हैं। ऋग्वेद की इस उक्ति पर ध्यान दें- 'अयं मे हस्तो भगवान'। यानी यह मेरा हाथ भगवान है। पूरी की पूरी गीता कर्म के ही महत्व को प्रतिवादित करती है। इसमें कृष्ण स्पष्ट रूप से कहते हैं कि कर्म करना शरीर का धर्म है, और यदि वह ऐसा नहीं करेगा, तो नष्ट हो जायेगा।यहाँ कर्म (श्रम) के साथ स्पष्ट रूप से शारीरिक अवलम्ब जुड़ा हुआ है। व्यक्ति को जीना है, लेकिन स्वस्थ रहकर। और स्वस्थ है कौन? वह जो स्वयं में स्थित रहता है, पर में नहीं।

इस बारे में तो गौतम बुद्ध ने अपने जीवन के अंतिम शब्द 'अप्पो दीपोभव' कहकर कमाल ही कर दिया। किसी भी बाहरी सहारे की जरूरत नहीं है। गुरु तक की भी नहीं। स्वयं को तपाओ और 'स्वय' ही स्वयं का दीपक बनो।

इस प्रकार भारतीय चिंतन में हमें स्वावलम्बन के रूप में दो मुख्य स्तम्भ दिखाई देते हैं। इनमें पहला है, स्वतंत्र चेतना की विराटता तथा दूसरा है - भौतिक लालसाओं की लघुता। सचमुच इसका अन्य कोई जोड़ नहीं है । अंत में इस शेर में स्वावलम्बन को तलाशने में कुछ वक्त लगाना उपयोगी होगा -

खुदी को कर बुलंद इतना

कि हर तक़दीर से पहले।

खुदा बन्दे से ये पूछे,

बता तेरी रज़ा क्या है।

Date:19-10-21

आयातित तेल पर निर्भरता घटाएं

भरत झुनझुनवाला, (लेखक आर्थिक मामलों के विशेषज्ञ हैं)

तेल के वैश्विक दाम वर्ष 2016 की तुलना में आज लगभग तीन गुना हो गए हैं। भारत पर तेल के ऊंचे दाम की दोहरी मार पड़ती है, क्योंकि हम अपनी खपत का 85 प्रतिशत तेल आयात करते हैं। इससे घरेलू महंगाई के साथ-साथ हमारा रुपया कमजोर होता है। हमारी आर्थिक संप्रभुता भी प्रभावित होती है। यदि किसी परिस्थिति में तेल का आयात रुक गया तो हमारी पूरी अर्थव्यवस्था ठप हो जाएगी। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने सही कहा था कि हमें आयातित तेल पर निर्भरता को घटाकर 50 प्रतिशत पर लाना होगा। इस दिशा में तेल के ऊंचे दाम मददगार हो सकते हैं। तेल के ऊंचे दाम के लाभ और हानि, दोनों हैं। पहले हानि पर विचार करें। इसकी मुख्य हानि यह होती है कि हमारा व्यापार घाटा बढ़ता है।दरअसल, आयातित तेल का भुगतान करने के लिए हमें डालर की जरूरत पड़ती है। इन डालर को अर्जित करने के लिए हमें अपने माल जैसे लौह खनिज को औने-पौने दाम पर बेचना पड़ता है। इससे बचने के लिए हमें सेवा क्षेत्र पर ध्यान देना चाहिए। सेवा क्षेत्र जैसे-सिनेमा, संगीत, लेखन इत्यादि में ऊर्जा की खपत कम होती है, जबकि विनिर्माण में ऊर्जा की खपत 10 गुना अधिक होती है। भारत में ऊर्जा के स्नेत कम हैं और हमारी अंग्रेजी शिक्षा की स्थिति भी बेहतर है। अत: ऐसा करने से हमारी आय बढ़ेगी और तेल की खपत कम होगी। बताते चलें कि चीन की आय में विनिर्माण का हिस्सा अधिक होने से एक किलो कच्चे तेल से चीन केवल 5.3 डालर की कीमत के माल का उत्पादन करता है। इसकी तुलना में भारत 8.2 डालर, अमेरिका 8.6 डालर और इंग्लैंड 16.2 डालर के माल का उत्पादन करते हैं। इंग्लैंड की आय में वित्तीय एवं शिक्षा सेवाओं का हिस्सा अधिक है। अत: यदि हम इंग्लैंड की तरह शिक्षा आदि सेवा क्षेत्रों में आगे बढ़ें तो एक किलो तेल से आज की तुलना में दोगुना उत्पादन कर सकते हैं।

हमें तेल के ऊंचे दाम के महंगाई पर प्रभाव को अधिक तूल नहीं देना चाहिए, क्योंकि वर्तमान महंगाई का प्रमुख कारण अर्थव्यवस्था की अच्छी चाल है। जैसे वर्ष 2018 में देश में 3.4 प्रतिशत की दर से मूल्य वृद्धि हो रही थी, वैसे ही वर्तमान में 6.2 प्रतिशत की दर से हो रही है। इसमें 2.8 प्रतिशत की अतिरिक्त वृद्धि हुई है, लेकिन देखा जाए तो साथ-साथ अर्थव्यवस्था भी द्रुत गति से चल रही है। जीएसटी की वसूली पूर्व के लगभग एक लाख करोड़ रुपये प्रति माह की तुलना में सितंबर 2021 में बढ़कर 1.17 लाख करोड़ रुपये हो गई है। यानी अर्थव्यवस्था में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। हम मान सकते हैं कि इसी के समानांतर हमारे देश के नागरिकों की आय में भी वृद्धि हुई होगी। इसकी तुलना में तेल के मूल्य का महंगाई पर प्रभाव कम पड़ता है। एक अनुमान है कि पेट्रोल के दाम में 100 प्रतिशत वृद्धि होने पर देश में महंगाई एक प्रतिशत बढ़ती है। डीजल के दाम में 100 प्रतिशत वृद्धि होने पर महंगाई 2.3 प्रतिशत बढ़ती है। दोनों का सम्मिलित प्रभाव हम 1.5 प्रतिशत मान सकते हैं। इसलिए तेल के दाम में हुई 50 प्रतिशत की वृद्धि का महंगाई पर केवल 0.75 प्रतिशत प्रभाव पड़ा होगा, जबकि महंगाई 2.8 प्रतिशत की दर से बढ़ी है। इसका अर्थ हुआ कि महंगाई अर्थव्यवस्था की बढ़ी चाल के कारण ज्यादा बढ़ी है। वर्तमान में तेल के दाम उछल रहे हैं, क्योंकि विश्व में उत्पादन बढ़ रहा है। इससे लोगों की आय भी बढ़ रही है। इस बढ़ी हुई आय से उपभोक्ता महंगा तेल खरीद सकते हैं।

तेल की मूल्य वृद्धि से तीसरा प्रभाव वित्तीय घाटे पर बताया जा रहा है। यह वास्तव में भ्रामक तर्क है। अपने देश में तेल पर आयात कर प्रतिशत के रूप में लगाया जाता है। तेल पर वसूली गई एक्साइज ड्यूटी यानी उत्पाद शुल्क लगभग 36 प्रतिशत होती है। इसलिए तेल के दाम बढ़ने के साथ टैक्स की वसूली भी बढ़ जाती है। परिणामस्वरूप सरकार का राजस्व भी बढ़ता है। लिहाजा वित्तीय घाटा घटता है, न कि बढ़ता है। यदि केंद्र सरकार एक्साइज ड्यूटी की दर में कटौती करे तब सरकार का राजस्व घटेगा और वित्तीय घाटा बढ़ेगा, लेकिन यह प्रभाव एक्साइज ड्यूटी की दर में कटौती का होगा, न कि तेल के दाम में वृद्धि का। हालांकि अभी न तो सरकार एक्साइज ड्यूटी की दर में कटौती कर रही है और न ही उसको ऐसा करना चाहिए, क्योंकि तेल के ऊंचे दाम के कई लाभ भी हैं जिन पर हमें विचार करना चाहिए।

पहला लाभ यह है कि तेल के ऊंचे दाम विश्व अर्थव्यवस्था की गति को दर्शाते हैं। इससे हमारे निर्यात में भी वृद्धि होती है, जिसका हमारी अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। दूसरा, तेल निर्यातक देशों में कार्यरत भारतीय श्रमिकों द्वारा रेमिटेंस अधिक भेजी जाएगी। तीसरा, तेल के ऊंचे दाम से हमारी ऊर्जा उपयोग की कुशलता में सुधार होगा। जब तेल के दाम ऊंचे होते हैं तब हम अधिक एवरेज देने वाली बाइक या कार खरीदते हैं। इससे तेल की खपत कम होती है और हमारी आर्थिक संप्रभुता के साथ-साथ ग्लोबल वार्मिंग पर भी प्रभाव कम पड़ता है, जिसका संपूर्ण अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक असर पड़ता है। ध्यान दें कि ग्लोबल वार्मिंग के कारण तूफान, बाढ़, सूखा इत्यादि समस्याएं पैदा हो रही हैं, जो हमारी अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुंचाती हैं। चौथा, सौर और पवन ऊर्जा को बढ़ावा मिलता है जिससे अंतत: हमारी आर्थिक संप्रभुता सुरक्षित होती है और ग्लोबल वार्मिंग कम होती है। इन लाभों को देखते हुए हमें तेल के ऊंचे दाम को सहन करना चाहिए।

बिजली उत्पादन के लिए जिम्मेदार ऊर्जा मंत्रलय में कार्यरत नौकरशाहों का एक वर्ग मानता है कि ऊर्जा की अधिक खपत ऊंचे जीवन स्तर का द्योतक है। ऐसा कहना तार्किक नहीं है। जानकारों का कहना है कि जीवन स्तर और ऊर्जा खपत का संबंध विच्छेद हो गया है। आज हम कम ऊर्जा में उत्तम जीवन जी सकते हैं। कम ऊर्जा से बाइक, रेफ्रिजरेटर आदि उपकरणों को चलाया जा सकता है। पानी गर्म करने के लिए सोलर पैनल लगाए जा सकते हैं। सुख आम के पेड़ के नीचे निद्रा में

ज्यादा और एयरकंडीशन बंद कमरे में कम भी हो सकता है। इसलिए ऊर्जा की खपत बढ़ाने के स्थान पर कम ऊर्जा में उच्च जीवन स्तर हासिल करने के उपाय खोजने चाहिए। तेल के ऊंचे दाम को सहन और वहन करना चाहिए।

Date:19-10-21

सच देखें वीर सावरकर पर सवाल उठाने वाले

अवधेश कुमार, (लेखक राजनीतिक विश्लेषक हैं)

वीर सावरकर और उनके जैसे दूसरे स्वतंत्रता सेनानियों ने कल्पना भी नहीं की होगी कि उनके देश के लोग ही कभी उनके शौर्य, वीरता और इरादे पर प्रश्न उठाएंगे। त्रासदी यह है कि वैचारिक मतभेदों के कारण एक महान स्वतंत्रता सेनानी, योद्धा, समाज सुधारक, लेखक, कवि, इतिहासकार को कायर और अंग्रेजों का भक्त साबित करने की शर्मनाक कोशिश हो रही है। जिन लोगों ने शोध नहीं किया, इतिहास ठीक से नहीं पढ़ा, वे भी सावरकर का नाम आते ही कूद जाते हैं, जिसमें ओवैसी जैसे लोग हैं। कोई कहता है कि गांधीजी तो 1915 में भारत आए और सावरकर ने 1913 में माफीनामा लिखा, फिर गांधीजी ने उन्हें कब सलाह दी? ये लोग एक बार गांधी वांग्मय के उन अंशों को पढ़ लेते तो समस्या नहीं होती। सच यही है कि उन्होंने अपनी ओर से सावरकर बंधुओं को अंडमान जेल से रिहा कराने की भरपूर कोशिश की।

जो लोग माफीनामा की बात कर रहे हैं, उन्हें यह जानना आवश्यक है कि सावरकर ने छह बार रिहाई के लिए अर्जी दायर की। इसमें 1911 से 1919 तक पांच बार तथा महात्मा गांधी के सुझाव पर 1920 में एक बार। 30 अगस्त, 1911 को सावरकर ने पहला माफीनामा भरा, जिसे अंग्रेज सरकार ने तीन दिनों बाद ही खारिज कर दिया। दूसरी याचिका उन्होंने 14 नवंबर, 1913 को लगाई, वह भी खारिज हो गई। इस तरह उनकी चार याचिकाएं खारिज हुईं। 1919 में अंग्रेजों ने जार्ज पंचम के आदेश पर भारतीय कैदियों की सजा माफ करने की घोषणा यह कह कर की कि प्रथम विश्व युद्ध में भारत के लोगों ने उनका पूरा साथ दिया है, इसलिए वे राजनीतिक कैदियों की रिहाई कर रहे हैं। इसके बाद काफी कैदी रिहा हुए, पर इसमें विनायक दामोदर सावरकर और उनके बड़े भाई गणोश दामोदर सावरकर का नाम नहीं था। इस पर उनके छोटे भाई नारायणराव सावरकर ने गांधीजी को 18 जनवरी,1920 के अपने पहले पत्र में सरकारी माफी के तहत अपने भाइयों की रिहाई सुनिश्चित कराने के संबंध में सलाह और मदद मांगी। एक सप्ताह बाद यानी 25 जनवरी, 1920 को गांधीजी ने लिखा, 'प्रिय सावरकर, मुझे आपको सलाह देना कठिन लग रहा है, फिर भी मेरी राय है कि आप एक विस्तृत याचिका तैयार कराएं, जिसमें जिक्र हो कि आपके भाइयों द्वारा किया गया अपराध पूरी तरह राजनीतिक था। मैं इस मामले को अपने स्तर पर भी उठा रहा हूं।'गांधीजी ने 26 मई, 1920 को यंग इंडिया (महात्मा गांधी कलेक्टेड वर्क्स वाल्यूम 20, पृष्ठ 368) में लिखा, 'भारत सरकार और प्रांतीय सरकारों के चलते कई कैदियों को माफी का लाभ मिला है, लेकिन कई प्रमुख लोगों को अब तक रिहा नहीं किया गया। मैं इनमें सावरकर बंधुओं को गिनता हूं।' एक और पत्र (कलेक्टेड वर्क्स आफ गांधी, वाल्यूम 38, पृष्ठ 138) में गांधीजी ने लिखा, 'मैं राजनीतिक बंदियों के लिए जो कर सकता हूं, वह करूंगा। ऐसा कभी नहीं हुआ कि मैं डर की वजह से चुप रह गया हूं।'

जो यह मानने को तैयार नहीं कि गांधीजी ने सावरकर के लिए कोशिश की होगी, उन्हें यंग इंडिया का वह लेख पढ़ना चाहिए जिसमें उन्होंने लिखा, 'सावरकर के पुलिस हिरासत से भागने की सनसनीखेज कोशिश और फ्रांसीसी समुद्री सीमा में कूदने की बात अभी तक लोगों के जेहन में ताजा है। उसने फग्युरुसन कालेज से पढ़ाई की, फिर लंदन में बैरिस्टर बना। वह 1857 की सिपाही क्रांति के इतिहास का लेखक है। ..उसके खिलाफ हिंसा का कोई आरोप साबित नहीं हुआ।' गांधीजी ने लिखा कि वायसराय को दोनों भाइयों को आजादी देनी ही चाहिए, अगर इस बात के पक्के सुबूत न हों कि वे राज्य के लिए खतरा बन सकते हैं। गांधीजी का कहना था कि जनता को यह जानने का हक है कि किस आधार पर दोनों भाइयों को कैद में रखा जा रहा है?

गांधीजी की लंदन में सावरकर से तब मुलाकात हुई, जब वह इंडिया हाउस हास्टल में रहकर बैरिस्टर की पढ़ाई कर रहे थे। उनकी गांधीजी से स्वतंत्रता आंदोलन पर गंभीर चर्चा हुई थी। सावरकर मांसाहारी थे और उन्होंने गांधीजी के लिए वही भोजन बनाया। गांधीजी वैष्णव थे, इसलिए मांस देखकर परेशान हो गए। सावरकर ने कहा था कि इस समय तो ऐसे भारतीय चाहिए जो अंग्रेजों को कच्चा खा जाएं और आप तो मांस से ही घबराते हैं। हिंसा और अहिंसा को लेकर भी दोनों की बहस हुई। गांधीजी ने गुजरात वापसी के दौरान समुद्री जहाज पर हिंद स्वराज की रचना की। इसमें सावरकर से बहस का भी बड़ा योगदान था। सावरकर गांधीजी की अहिंसक नीति के आलोचक थे, लेकिन उन्होंने कभी उनके विरुद्ध अपमानजनक टिप्पणी नहीं की। जरा सोचिए कितनी बड़ी त्रसदी थी। न सुप्रीम कोर्ट ने उन्हें दोषी माना, न कपूर आयोग ने। अगर वह दोषी थे तो फिर रिहा कैसे हो गए? नाथूराम गोडसे हिंदू महासभा का सदस्य रह चुका था, लेकिन वह सावरकर को लानत भरे पत्र भेजता था।

ये पत्र इसके प्रमाण हैं कि सावरकर का गांधीजी की हत्या से दूर-दूर तक लेना नहीं था। जिस व्यक्ति ने दस वर्ष से ज्यादा काला पानी में बिताया और 23 वर्ष तक अंग्रेजों की निगरानी झेली, उसका सम्मान होना चाहिए। जिसे माफीनामा कहा जा रहा है, वह एक सामान्य कर्म था, जिसका उपयोग स्वतंत्रता सेनानी रिहाई के आवेदन के रूप में करते थे। सावरकर का मानना था कि अंग्रेजों की जेल में रहकर सड़ने से किसी का भला नहीं है। इसलिए हर हाल में बाहर आकर जितना संभव हो राष्ट्र, धर्म और समाज के लिए काम किया जाए।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:19-10-21

जलवायु परिवर्तन पर हो गंभीर

संपादकीय

जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए होने वाले संयुक्त राष्ट्र के सम्मेलन सीओपी26 के आयोजन का समय करीब आ रहा है। यह शिखर बैठक ग्लासगो में होनी है और इस बात को लेकर अटकलों का बाजार गर्म है कि भारत सरकार राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (एनडीसी) योजना के तहत जताई गई प्रतिबद्धताएं संशोधित करने की स्थिति में है या नहीं। भारत ने ये प्रतिबद्धताएं 2015 में पेरिस शिखर बैठक में जताई थीं। अमेरिका, यूरोपीय संघ और चीन समेत अन्य बड़े

कार्बन उत्सर्जक देशों ने ऐसा किया है। हालांकि भारत सरकार ने कुछ उचित कारणों के साथ दलील दी है कि बड़ी जलवायु महत्त्वाकांक्षा के साथ बदलाव को लेकर कहीं अधिक प्रतिबद्धता तथा दुनिया भर में इसके समायोजन की लागत भी शामिल होनी चाहिए। हाल ही में विश्व बैंक समूह के अधिकारियों समेत श्रोताओं के एक जमावड़े को संबोधित करते हुए केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने भी कहा कि अन्य देशों की प्रतिबद्धताओं को, खासतौर पर औद्योगिक देशों की प्रतिबद्धता, जिन्होंने अतीत में ग्रीनहाउस गैसों का अत्यधिक उत्सर्जन किया है को कानूनी रूप से बाध्यकारी बनाया जाना चाहिए और उन्हें 'शून्य उत्सर्जन' लक्ष्य जल्दी हासिल करना चाहिए।

भारत के पास अच्छा अवसर है कि वह बताए कि वह पहले ही जलवायु परिवर्तन के लक्ष्यों को समय से पहले हासिल कर रहा है लेकिन तथ्य यह है कि सीओपी26 जैसे समूहों में होने वाली अंतरराष्ट्रीय वार्ताएं काफी जटिल होती हैं और उनके लिए उच्चस्तरीय प्रतिबद्धता और विभिन्न अंशधारकों की निरंतर संबद्धता की जरूरत होती है। अमेरिका ने एक जलवायु दूत नियुक्त किया है जिसके पास अंतरराष्ट्रीय मामलों का विस्तृत अनुभव और अहम राजनीतिक प्रतिष्ठा है। वह दूत हैं पूर्व विदेश मंत्री, सीनेटर और राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी जॉन केरी।

सीओपी26 के मेजबान ब्रिटेन ने कैबिनेट स्तर के राजनेता आलोक शर्मा को इस काम के लिए नियुक्त किया है। वह इस सम्मेलन में तथा इससे इतर जलवायु परिवर्तन से निपटने के देश के प्रयासों का नेतृत्व करेंगे। यूरोपीय संघ के पास जलवायु परिवर्तन संबंधी लक्ष्यों और वार्ताओं के लिए एक समर्पित भारी भरकम विभाग है और उनकी जलवायु वार्ता टीम के पास पिछली तमाम सीओपी का अनुभव है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को यह देखना होगा कि भारतीय टीम तुलनात्मक रूप से कम ताकतवर है। अब वक्त आ गया है कि भारत के जलवायु परिवर्तन संबंधी प्रयासों के लिए कैबिनेट स्तर के अधिकारी की तैनाती की जाए। पर्यावरण मंत्रालय के नाम में भले ही वन एवं जलवायु परिवर्तन जोड़ दिया गया हो लेकिन इससे उदेश्य पूरा नहीं होता।

यह सवाल शेष है कि इस नई टीम को प्रधानमंत्री कार्यालय में होना चाहिए या अतीत के जी20 शेरपा के तर्ज पर बनाया जाना चाहिए। परंतु आदर्श स्थिति में केरी जैसे लोगों के साथ वार्ता करने के लिए ऐसे व्यक्ति का अपना राजनीतिक कद होना चाहिए। मौजूदा समस्या के लिए भारत जवाबदेह नहीं है लेकिन उत्सर्जन कम करने के क्षेत्र में उसके कदमों और प्रतिबद्धताओं पर करीबी नजर होगी। भारत को अंतरराष्ट्रीय वार्ताओं में अपनी बात रखने और बचाव करने में सक्षम होना होगा। जलवायु वार्ताकारों की एक विशिष्ट टीम भी होनी चाहिए जो फाइलों और संयुक्त वक्तव्यों से परे जाकर संस्थागत स्मृति तैयार कर सके। जलवायु परिवर्तन को लेकर भारत की प्रतिबद्धता का वैश्विक आकलन उसके वक्तव्यों से नहीं बल्कि इस बात से भी होगा कि सरकार इससे निपटने के लिए कितनी क्षमता आवंटित करती है। इस दिशा में काफी काम करने की जरूरत है। जलवायु परिवर्तन के मामले में भारत की स्थिति का आकलन शिखर बैठकों में शिरकत के आधार पर नहीं बल्कि उभरते वैश्विक घटनाक्रम वैज्ञानिक सहमति और घरेलू नीतियों को लेकर निरंतर दी जा रही प्रतिक्रिया के आधार पर होना चाहिए। ऐसा नहीं हो सकता कि पहले से ही काम के बोझ तले दबे किसी संयुक्त सचिव स्तर के अधिकारी पर एक और जिम्मेदारी थोप दी जाए।

जनसत्ता

Date:19-10-21

आस्था बनाम कानून

संपादकीय

जनतंत्र में हर किसी को धार्मिक आस्था की आजादी है। उसे अपनी आस्था की रक्षा करने का भी अधिकार है। मगर इसका यह अर्थ कतई नहीं कि कानून की परवाह ही न करें। किसी की आस्था अगर दूसरे के अधिकारों का हनन या कानून का उल्लंघन करती है, तो उसे किसी रूप में उचित नहीं कहा जा सकता। मगर शायद निहंग जत्थेबंदी के लोगों को इस मर्यादा की परवाह नहीं। पिछले हफ्ते उन्होंने सिंघू सीमा पर एक युवक का अंग भंग कर इसलिए उसकी हत्या कर दी कि उसने पवित्र ग्रंथ का तथाकथित अनादर किया। किसी के भी धर्मग्रंथ की बेअदबी नहीं होनी चाहिए। अगर कोई ऐसा करता है, तो उसे कानूनी रूप से दंडित करने का प्रावधान है। मगर निहंग जत्थे के लोगों ने आरोपी युवक को खुद दंडित करना उचित समझा। जब उस मामले की चौतरफा निंदा शुरू हुई तो तीन लोगों ने खुद को जिम्मेदार मानते हुए पुलिस के सामने समर्पण कर दिया। इनमें एक व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया। हरियाणा पुलिस ने इस मामले को गंभीरता से लिया और जांच शुरू कर दी। मगर पुलिस की सख्ती पर निहंगों ने धमकी दी है कि अगर हरियाणा पुलिस ने एक भी और सदस्य की गिरफ्तारी की तो वे अपने चार गिरफ्तार सदस्यों को भी छुड़ा लेंगे।

हालांकि यह पहली घटना नहीं है, जब खुद को कानून से ऊपर मानते हुए निहंगों ने किसी मामले में खुद दंड देना उचित माना। कुछ महीने पहले ही पंजाब में जब एक पुलिसकर्मी ने उनसे कोरोना नियमों का पालन करने को कहा, तो उसका हाथ काट डाला था। कृषि कानूनों के विरोध में किसान संगठनों का आंदोलन चल रहा है। इसके समर्थन में निहंग भी सिंघू बार्डर पर धरना दे रहे हैं।हालांकि संयुक्त किसान मोर्चा ने शुरू से निहंगों को अपने से अलग रखा है। युवक की हत्या पर भी उसने निहंग जत्थेबंदी की आलोचना की। इसलिए कि किसान नेताओं को बिल्कुल भरोसा नहीं है कि निहंग जत्थेबंदी शांतिपूर्ण तरीके से आंदोलन चलने देगी। छब्बीस जनवरी को हुए उपद्रव के समय भी निहंग सदस्य घोड़ों पर सवार भाला और तलवारें लहराते देखे गए थे। लोकतंत्र में किसी बात के विरोध का यह तरीका कतई स्वीकार नहीं किया जा सकता। अगर गुरु ग्रंथ साहिब की बेअदबी हुई थी, तो आरोपी को कानून के हवाले किया जाना चाहिए था।

यह अच्छी बात है कि कुछ निहंग सदस्यों ने अपनी जिम्मेदारी मानते हुए पुलिस के समक्ष समर्पण कर दिया। मगर इतने भर से मामला रफादफा नहीं हो जाता। जिस बर्बरता से उस युवक को मारा गया, वह कोई सभ्य समाज की निशानी नहीं है। अपनी आस्था के नाम पर किसी से उसका जीने का अधिकार छीन लेने की आजादी किसी को नहीं दी जा सकती।पुलिस को कानून सम्मत जांच और कार्रवाई का अधिकार है और अपेक्षा की जाती है कि निहंग सदस्य उसमे सहयोग करें न कि धौंस पट्टी दिखाएं। इस तरह धमाका या भयभीत कर पुलिस को उसके काम से अलग रखने का प्रयास भी कानूनी रूप से दंडनीय है। क्या निहंग इस देश के नागरिक नहीं, जो वे अपनी समांतर सत्ता और व्यवस्था चलाना चाहते हैं। एक के बाद दूसरी मनमानी करने से बाज नहीं आ रहे। उनकी धौंस की परवाह न करते हुए पुलिस से यही अपेक्षा की जाती है कि वह इस मामले पर सख्त और कानून सम्मत रुख अख्तियार करेगी।

राष्ट्रीय सहारा

Date:19-10-21

मत भूलिए योगदान

अवधेश कुमार

इस समय अपने महापुरुषों को लेकर वैचारिक विभाजन की जो हृदयविदारक तस्वीर हमारे सामने है, उसकी कल्पना आजादी के पहले शायद ही किसी ने की हो। मतभेद तब भी थे, लेकिन सम्मान सबका था। वीर सावरकर जैसे अद्वितीय बहुआयामी व्यक्तित्व की छीछालेदर करने वाले उन महापुरुषों का भी अपमान कर रहे हैं, जिनका नाम लेकर वे सावरकर को अपमानित करते हैं।

बाबा साहब अंबेडकर रचनाओं में सावरकर के लिए महाशय शब्द का प्रयोग करते हैं। गांधी जी ने उनके बारे में जो लिखा उसमें सम्मान और प्रेम का भाव था। वे स्वतंत्रता संग्राम के एक तेजस्वी सेनानी, महान क्रांतिकारी, समाज सुधारक, चिंतक, सिद्धहस्त लेखक, इतिहासकार, कवि, ओजस्वी वक्ता तथा दूरदर्शी राजनेता थे। भारत के लिए उनका योगदान अद्वितीय था, लेकिन इसे तभी समझ पाएंगे जब उनके लक्ष्य को समझेंगे। उनका लक्ष्य भारतीयों के अंदर अपनी सभ्यता, संस्कृति, प्राचीन विरासत और राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान का भाव जागृत कर अंदर वैज्ञानिक सोच व तर्कशीलता पैदा करना, उसके आधार पर अंग्रेजों के शासन को धवस्त करना तथा भारत के पुनर्निर्माण के लिए न केवल सामाजिक एकता कायम करना बल्कि भविष्य के लिए आर्थिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक आदि आधार भूमि देना। उन्होंने हिंदुत्व को समग्र दर्शन और विचार के रूप में लिखकर प्रस्तुत किया।

वे एक ऐसे इतिहासकार हैं, जिन्होंने भारत राष्ट्र की विजय के इतिहास को तब प्रमाणिक ढंग से लिपिबद्ध किया। भारतीय इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ उस समय अद्भुत पुस्तक के रूप में सामने आई जिसने अंग्रेज इतिहासकारों द्वारा भारत की पतनशीलता के बारे में फैलाए झूठ को ध्वस्त कर दिया। इससे भारतीयों के अंदर स्वाभिमान की चेतना जागृत हुई। सावरकर जी के साथ त्रासदी यह है कि कुछ लोग उन कार्यों को भी उनको खलनायक बनाने के रूप में लेते हैं, जो भारत के लिए उनका महत्वपूर्ण योगदान था। उदाहरण के लिए अंग्रेजों के समय सेना में हिंदुओं के शामिल होने का अभियान। अभियान उन्होंने चलाया और अपने लोगों को पूरे देश में कहा कि हिंदुओं को सेना में भर्ती होने के लिए अभियान चलाओ। तब हिंदू सेना में जाने से बचते थे। मुसलमान ज्यादा थे। जैसी स्थिति मुस्लिम लीग के आंदोलन से पैदा हो गई थी उसमें आवश्यक था कि संतुलन के लिए हिंदू सेना में शामिल हों, हथियारों का प्रशिक्षण लें। इससे उनके अंदर न केवल वीरता का भाव पैदा होगा बल्कि भविष्य के लिए भी उपयोगी होंगे। भारत को स्वतंत्रता देने पर ब्रिटेन के हाउस ऑफ कॉमन्स में जो बहस हुई;

उसमें तत्कालीन प्रधानमंत्री क्लीमेंट एटली ने कहा था कि सेना में जिस तरह का असंतोष और विद्रोह है उसे संभालना मुश्किल है।

स्वतंत्रता में भारतीय नौसेना के विद्रोह की चर्चा सभी करते हैं पर यह भूल जाते हैं इसके पीछे सावरकर का योगदान कितना बड़ा है। जब भारत का विभाजन हुआ तो सेना में भी मुसलमानों का बहुमत पाकिस्तानी सेना का भाग बन गया। हिंदुओं को सेना में शामिल नहीं कराया गया होता तो क्या स्थिति होती इसकी आसानी से कल्पना की जा सकती है। वीर सावरकर के जीवन के अनेक आयामों में सामाजिक सुधार यानी जाति भेद और छुआछूत को खत्म करने के लिए उनके प्रयास विरोधी चर्चा में नहीं लाना चाहते। उन्होंने अपने बड़े भाई नारायण राव को 6 जुलाई, 1920 को अंडमान जेल से लिखे पत्र में उन्होंने कहा कि मुझे जातिगत भेदभाव और छुआछूत के खिलाफ बगावत की उतनी ही जरूरत महसूस होती है, जितनी कि भारत पर विदेशी कब्जे के खिलाफ लड़ने की। सावरकर ने सप्तनिरोधों यानी प्रतिबंधों की चर्चा करते हुए इसे छोड़ने का अभियान चलाया। इनमें वेद पढ़ने पर प्रतिबंध, जातियों के लिए विशेष जीवन वृत्ति अपनाने पर प्रतिबंध, अस्पृश्यता, कर्मकांड प्रतिबंध, भोजन संबंधी प्रतिबंध, जाति से बाहर विवाह पर प्रतिबंध आदि शामिल थे। अस्पृश्यता को मानवता पर कलंक कहते हुए इसके विरुद्ध अभियान चलाया। हिंदू धर्म त्याग चुके लोग वापस आएं इसके लिए शुद्धि अनुष्ठानों का आयोजन किया। मंदिरों में अस्पृश्य जातियों के प्रवेश के लिए व्यापक अभियान चलाया।

उन्होंने कई उच्च जाति के लोगों को यह समझाने में सफलता पाई कि वे अपने मंदिरों में निम्न जातियों को प्रार्थना करने दें। 1927 में रत्नागिरी में उन्होंने विभिन्न जातियों का एक महासभा आयोजन किया और 19 नवम्बर 1929 में विट्ठल मंदिर के गर्भ गृह में अछूतों को प्रवेश दिलाने में सफलता पाई। 1931 में प्राण प्रतिष्ठा के साथ उद्घाटित पतित पावन मंदिर उनकी ऐसी देन थी, जिसकी कल्पना उसके पहले कोई नहीं कर सकता था। शंकराचार्य उसमें आए और एक अछूत ने उनका पैर धोया। इस मंदिर को एक ऐसे केंद्र में विकसित किया जाना था, जिसमें सामूहिक प्रार्थनाएं शुरू होने पर अनेक मंदिरों की समस्याओं का समाधान हो जाए। इसमें छोटी जाति के बच्चों को संस्कृत ऋचाओं का अभ्यास कराया जाता था और विष्णु की मूर्ति का अभिषेक इन्हीं बच्चों द्वारा मंत्रोच्चार के बीच किया जाता था। उन्होंने महिलाओं के लिए पतित पावन मंदिर में ही सामुदायिक भोज शुरू कराया। उस समय महिलाओं के लिए सामुदायिक भोज आयोजित करना बड़ी सामाजिक क्रांति थी। उन्होंने वहीं एक रेस्तरां खोला, जिसमें अस्पृश्य जातियों के लोग परोसने का काम करते थे।

सामाजिक सुधार के उनके सारे कार्यों का यहां विस्तार से उल्लेख संभव नहीं है। इतने से आप कल्पना कर सकते हैं कि उन्होंने हिंदू समाज के बीच अस्पृश्यता व जाति भेद खत्म करने के साथ अंधविश्वास-पाखंड को दूर करने तथा कर्मकांड पर एक जाति के वर्चस्व को तोड़ने की दिशा में कितना अद्भुत काम किया था। सावरकर ने सामाजिक सुधारों के लिए नाटक, कविताएं, गीत तथा पुस्तकें लिखी। उन्होंने ऊंची जाति के लोगों को प्रोत्साहित करने के लिए स्वयं एक अछूत समुदाय की लड़की को गोद ले लिया था। स्वतंत्रता आंदोलन के साथ राष्ट्र निर्माण, भारत के सुरक्षा सिद्धांत व सैन्य बल बढ़ाने से लेकर जीवन का कोई क्षेत्र नहीं था, जिसमें सावरकर ने योगदान नहीं दिया। उनके योगदान पर काफी कुछ लिखा जा सकता है। इंदिरा गांधी ने उन पर न केवल डाक टिकट जारी किया, बल्कि उनके कार्यकाल में फिल्म डिवीजन ने एक डॉक्यूमेंट्री बनाई। क्यों? उनके योगदान के कारण ही तो।

Date:19-10-21

वैकल्पिक ऊर्जा स्रोत में है दमइन

पंकज चतुर्वेदी

इन दिनों देश में कोयले की कमी के चलते दमकती रोशनी और सतत विकास पर अंधियारा दिख रहा है। भारत की अर्थव्यवस्था में आए जबरदस्त उछाल ने ऊर्जा की खपत में तेजी से बढ़ोतरी की है और यही कारण है कि देश गंभीर ऊर्जा संकट के मुहाने पर खड़ा है। आर्थिक विकास के लिए सहज और भरोसेमंद ऊर्जा की आपूर्ति अत्यावश्यक होती है, जबकि नई आपूर्ति का खर्च तो बेहद डांवाडोल है।

भारत में यूं तो दुनिया में कोयले का चौथा सबसे बड़ा भंडार है, लेकिन ख़पत की वजह से भारत कोयला आयात करने में दुनिया में दूसरे नंबर पर है। हमारे कुल बिजली उत्पादन- 3,86888 मेगावाट में थर्मल पावर सेंटर की भागीदारी 60.9 फीसद है। इसमें भी कोयला आधारित 52.6 फीसद, लिग्नाइट, गैस व तेल पर आधारित बिजली घरों की क्षमता क्रमशः 1.7, 6.5 और 0.1 प्रतिशत है। हम आज भी हाईड्रो अर्थात पानी पर आधारित परियोजना से महज 12.1 प्रतिशत, परमाणु से 1.8 और अक्षय ऊर्जा स्रोत से 25.2 प्रतिशत बिजली प्राप्त कर रहे हैं। इस साल सितम्बर 2021 तक, देश के कोयला आधारित बिजली उत्पादन में लगभग 24 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है।

बिजली संयंत्रों में कोयले की दैनिक औसत आवश्यकता लगभग 18.5 लाख टन है, जबकि हर दिन महज 17.5 लाख टन कोयला ही वहां पहुंचा। यह किसी से छुपा नहीं है कि कोयले से बिजली पैदा करने का कार्य हम अनंत काल तक कर नहीं सकते क्योंकि प्रकृति की गोद में इसका भंडार सीमित है। वैसे भी दुनिया पर मंडरा रहे जलवायु परिवर्तन के खतरे में भारत के सामने चुनौती है कि किस तरह काबन उत्सर्जन कम किया जाए, जबकि कोयले के दहन से बिजली बनाने की प्रक्रिया में बेशुमार कार्बन निकलता है। कोयले से संचालित बिजलीघरों से स्थानीय स्तर पर वायु प्रदूषण की समस्या खड़ी हो रही है विशेष रूप से नाइट्रोजन ऑक्साइड और सल्फर ऑक्साइड के कारण। इन बिजलीघरों से उत्सर्जित कार्बन डाइऑक्साइड जैसी गैसों से उपजा प्रदूषण 'ग्रीन हाउस गैसों' का दुश्मन है और धरती के गरम होने और मौसम में अप्रत्याशित बदलाव का कारक है। परमाणु बिजली घरों के कारण पर्यावरणीय संकट अलग तरह का है। एक तो इस पर कई अंतरराट्रीय पाबंदिया हैं और फिर चेरनोबेल और फुकुशिमा के बाद स्पट हो गया है कि परमाणु विखंडन से बिजली बनाना किसी भी समय एटम बम के विस्फोट जैसे कुप्रभावों को न्योता है। आण्विक पदार्थों की देखभाल और रेडियोएक्टिव कचरे का निबटारा बेहद संवेदनशील और खतरनाक काम है। हवा सर्वसुलभ और खतराहीन उर्जा स्रोत है। आयरलैंड में पवन ऊर्जा से प्राप्त बिजली उनकी जरूरतों का 100 गुणा है। भारत में पवन ऊर्जा की अपार संभावनाएं हैं; इसके बावजूद हमारे यहां बिजली के कुल उत्पादन का महज 1.6 फीसद ही पवन ऊर्जा से उत्पादित होता है। हमारी पवन ऊर्जा की क्षमता 300 गीगावाट प्रतिवर्ष है। पवन ऊर्जा देश के ऊर्जा क्षेत्र की तकदीर बदलने में सक्षम है। देश में इस समय लगभग 39 गीगावाट पवन-बिजली उत्पादन के संयत्र स्थापित हैं और हम दुनिया में चौथे स्थान पर हैं। यदि गंभीरता से प्रयास किया जाए तो अपनी जरूरत के 40 प्रतिशत बिजली को पवन ऊर्जा के माध्यम से पाना बेहद सरल उपाय है।

सूरज से बिजली पाना भारत के लिए बहुत सहज है। देश में साल में आठ से दस महीने धूप रहती है और चार महीने तीखी धूप रहती है। वैसे भी जहां अमेरिका व ब्रिटेन में प्रति मेगावाट सौर ऊर्जा उत्पादन पर खर्चा क्रमशः 238 और 251 डॉलर है वहीं भारत में यह महज 66 डॉलर प्रति घंटा है, यहां तक कि चीन में भी यह व्यय भारत से दो डॉलर अधिक है। कम लागत के कारण घरों और वाणिज्यिक एवं औद्योगिक भवनों में इस्तेमाल किए जाने वाले छत पर लगे सौर पैनल जैसी रूफटॉप सोलर फोटोवोल्टिक (आरटीएसपीवी) तकनीक, वर्तमान में सबसे तेजी से लगाई जाने वाली ऊर्जा उत्पादन तकनीक है। अनुमान है कि आरटीएसपीवी से 2050 तक वैश्विक बिजली की मांग का 49 प्रतिशत तक पूरा होगा। पानी से बिजली बनाने में पर्वतीय राज्यों के झरनों पर यदि ज्यादा निर्माण से बच कर छोटे टरबाइन लगाए जाएं और उनका वितरण भी स्थानीय स्तर पर योजनाबद्ध किया जाए तो दूरस्था पहाड़ी इलाकों में बिजली की पूर्ति की जा सकती है। बिजली के बगैर प्रगति की कल्पना नहीं की जा सकती। यदि ऊर्जा का किफायती इस्तेमाल सुनिश्चित किए बगैर ऊर्जा के उत्पादन की मात्रा बड़ाई जाती रही तो इस कार्य में खर्च किया जा रहा पैसा व्यर्थ जाने की संभावना है और इसका विषम प्रभाव अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:19-10-21

परमाणु से बिजली बनाना कहीं ज्यादा कारगर

संदीपन देब, (वरिष्ठ पत्रकार)

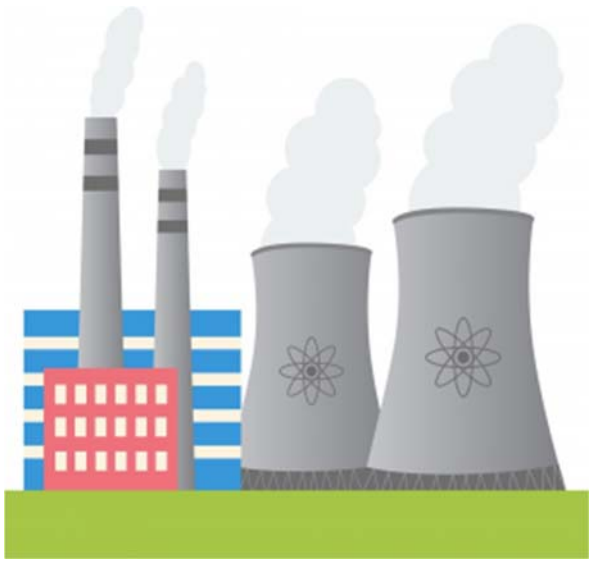

बीते एक महीने से, पूरी दुनिया बिजली और ऊर्जा संकट से जूझ रही है। हालांकि मुल्क-दर-मुल्क इसके कारण अलग-अलग हैं, लेकिन कमोबेश गुहार यही है कि जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता कम की जाए और मुख्यत: सौर व पवन जैसी अक्षय ऊर्जा का उत्पादन बढ़ाया जाए। हर समझदार इंसान निस्संदेह जीवाश्म ईंधन से बचने की ही सलाह देगा, पर हरित ऊर्जा के मौजूदा स्वरूप की गंभीर पड़ताल भी आवश्यक है। मसलन, सौर व पवन ऊर्जा के चरित्र में एकरूपता नहीं है। चूंकि सबसे आदर्श स्थिति में भी सौर व पवन ऊर्जा चौबीसों घंटे बिजली पैदा नहीं कर सकतीं, इसलिए बैक-अप के लिए जीवाश्म ईंधन की दरकार रहेगी ही। यह तस्वीर तब तक नहीं बदलेगी, जब तक हम व्यापक पैमाने पर काम करने वाली कम लागत की ऐसी तकनीक विकसित नहीं कर लेते, जो इनके द्वारा उत्पादित बिजली को जमा कर सके।

ब्रिटेन का उदाहरण हमारे सामने है। वहां के प्रधानमंत्री बोरिस जॉनसन कहते हैं कि वह अपने देश को 'पवन ऊर्जा में सऊदी अरब' बनाना चाहते हैं। आज ब्रिटेन 24 फीसदी बिजली हवा से पैदा करता है। मगर इस साल उसने 'हवाहीन गरमी' देखी, जो ब्रिटेन के बिजली संकट के कारणों में से एक है। आज जर्मनी की 30 फीसदी जरूरत सौर व पवन ऊर्जा से पूरी होती है, लेकिन पिछले महीने जब कोयला और प्राकृतिक गैस की कमी से उसका वास्ता पड़ा, तो उसे एहसास हुआ कि अक्षय ऊर्जा पर आधा ट्रिलियन डॉलर के निवेश के बाद भी मौसम-आधारित स्वच्छ ऊर्जा की भंडारण क्षमता इतनी नहीं हो सकी है कि जीवाश्म-ईंधन से मुक्त कुछ घंटे वह मुहैया करा सके। पूरे यूरोपीय संघ में जर्मनी में ही घरेलू खपत के लिए बिजली सबसे महंगी (0.37 डॉलर प्रति किलोवाट) है। फ्रांस में इसकी कीमत 0.19 डॉलर प्रति किलोवाट है। साल 2019 में जर्मनी प्रति किलोवाट बिजली उत्पादन के लिए 350 ग्राम कार्बन डाई-ऑक्साइड उत्सर्जित करता था, जबकि फ्रांस छह गुना कम 56 ग्राम। फ्रांस में बिजली आखिर सस्ती व स्वच्छ क्यों है? इसका जवाब है, परमाणु ऊर्जा। फ्रांस ने 2020 में कुल उत्पादन में 78 फीसदी बिजली परमाणु से और 19 फीसदी अक्षय माध्यमों से पैदा की। जीवाश्म ईंधन की हिस्सेदारी तीन प्रतिशत थी। मगर परेशानी यह है कि हर बार जब 'परमाणु' शब्द का उच्चारण किया जाता है, तो तर्कपूर्ण तथ्य-आधारित रवैया दिखाने के बजाय नकारात्मक रुख अपनाया जाता है। जबकि, परमाणु ऊर्जा मौजूदा समय में सबसे सस्ता, हरित और सुरक्षित ऊर्जा-स्रोत हो सकता है।

फ्रांस और स्वीडन व बुल्गारिया जैसे अन्य देश, जहां परमाणु ऊर्जा से कहीं अधिक बिजली पैदा की जाती है, इसके सस्ते होने की पुष्टि करते हैं। रही बात हरित की, तो परमाणु ऊर्जा में कार्बन-उत्सर्जन नहीं होता। अमेरिका के सरकारी आंकड़े बताते हैं कि 1,000 मेगावाट पवन ऊर्जा फॉर्म के लिए समान क्षमता वाली परमाणु सुविधा वाले फॉर्म की तुलना में 360 गुना अधिक भूमि की जरूरत होती है, और सौर संयंत्रों के लिए 75 गुना अधिक। अमेरिका में पवन टर्बाइनों से टकराकर हर साल पांच लाख पक्षियों की मौत भी हो रही है। फिर, हम परमाणु ऊर्जा के विकिरण जोखिमों से भी अवगत हैं और परमाणु कचरे के निपटान के सुरक्षित तरीके हमारे पास हैं। लिहाजा, तमाम निम्न-कार्बन प्रौद्योगिकियों के बीच हमें सही का चुनाव करना होगा।

इस मामले में सबसे साहसिक फैसला तत्कालीन प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने लिया था। उन्होंने अमेरिका के साथ परमाणु समझौते किया। लेकिन राजनीतिक किंतु-परंतु के कारण ऐसा लगता है कि अब तक बहुत कुछ नहीं हुआ है। भारत आज भी महज तीन प्रतिशत बिजली परमाणु से पैदा करता है। पिछले महीने सरकार ने घोषणा की कि भारत अगले 10 वर्षों में परमाणु ऊर्जा क्षमता को तिगुना कर लेगा। पर भारत जितने यूरेनियम का इस्तेमाल करता है, उसका ज्यादातर हिस्सा आयात करता है। यह महंगा तो है ही, भू-राजनीतिक रूप से मुश्किल प्रक्रिया है। हमारे पास पर्याप्त थोरियम है। लिहाजा, हमें ऐसी परियोजनाओं में निवेश करना चाहिए, जो थोरियम को यूरेनियम में बदल दें, ताकि बिजली पैदा हो। दिक्कत यह है कि परमाणु ऊर्जा को लेकर वैश्विक व घरेलू, दोनों सियासत अमूमन अतार्किक रही है।

THE TIMES OF INDIA

Date:19-10-21

Second Quad?

Exciting opportunities await India in Middle East, but not without risks

TOI Editorials

Foreign minister S Jaishankar's visit to Israel could pitchfork India into the high-stakes strategic realm of the Middle East with a proposed new Quad grouping of the US, Israel, India and UAE. The Abraham Accords that saw the Donald Trump administration facilitate normalisation of relations between Israel and the Arab states of UAE, Bahrain, Morocco and Sudan have led to a significant realignment of strategic interests in the region. And with India having separately cultivated close strategic-security ties with Israel and the Gulf Arab nations, the new Israeli-Arab compact creates unprecedented space for New Delhi.

Benefits of this second Quad can be immense. First, it ties India into another alliance with the US, which is imperative to counter China's belligerence. Second, India already has a lot of soft power in the Middle East combined with a huge Indian diaspora of nearly 8 million. However, hitherto it was reluctant to officially join alliances given regional political complexities. But with the US reorienting its focus to the Indo-Pacific and powerful Arab states viewing Israel in a new light, the time is right for India to step up. In fact, the Middle East is already an important foreign market for Indian exporters, which can grow further given the region's youth-dominated demography. And with Israel's high-tech economy and the Gulf Arab nations' bid to diversify away from oil, there is much that can be done in Big Data, AI, quantum computing and other technologies of the future.

Of course, India still needs Iran to protect its interests in Taliban's Afghanistan. Besides, the last thing India would want is to be sucked into a wider sectarian conflict in the region. There's also the risk of the Israeli-Arab compact coming undone down the road. Therefore, Indian diplomacy is going to be tested here like never before. It must grow up and be nimble if it wants to successfully navigate the Middle East's tricky roads while reaping the rewards of a new alliance.

THE ECONOMIC TIMES

Date:19-10-21

It's Hydrogen Eration X

Arijit Barman

Isn't it ironic that the more sophisticated India's refineries are, the more polluting and expensive their energy source is? On an average, to refine 100 gm of crude oil to make low-sulphur petrol — the cleanest variant of fossil fuel refined in India — refineries need to 'reform' around 1.2 gm of hydrogen. But to make that much hydrogen, one needs three times more natural gas. But if that feedstock gas is liquefied natural gas (LNG), it is inevitably imported, adding to our energy bill. Worse, private refiners like Nayara Energy and Reliance Industries (RIL) actually burn pet coke or naphtha, which is five times more CO2-intensive than LNG.

In 2020-21, RIL generated about 45 million tonnes of CO2 emissions from its own operations, making it one of India's top emitters, as per Bloomberg data. On August 15, Narendra Modi unveiled the National

Hydrogen Mission. To make it a success, GoI wants to impose green hydrogen purchase obligations on several sectors including refining, fertiliser, city gas, steel and power in phases.

The petroleum ministry wants green hydrogen (the one made from renewable energy) to make up 10% of the overall hydrogen requirements of refiners in three years, increasing to 25% by the end of the decade. Some refineries are pushing back against such strict timelines and jostling for lax rules: a 10% obligation over the next nine years to maximise their existing investments. Others are suggesting voluntary transition to lessen the financial impact. That would be bad.

GoI's plan to 'decarbonise the economy' through renewable targets will only work if the hydrogen initiative is taken up by private refiners like RIL. The upcoming UN Climate Change Conference in Glasgow will be critical for the energy economics of non-Opec countries like India, a key guzzler of fossil fuels.

For long, our policymakers have set out to wean us away from crude addiction and move towards a gas economy, largely to decouple the pricing monopoly that a cabal of West Asian producers have wielded for decades. The ongoing electric vehicle (EV) revolution is accelerating this substitution of oil in the personal mobility space. Likewise, green hydrogen produced locally using renewable power can potentially substitute LNG imports for large industrial users and even commercial vehicles, and insulate us from price volatility.

Peak winter prices of gas have galloped this year. Asian buyers have ensured spot LNG prices surpass $50 per metric million British thermal units (MMBtu) for the first time ever. In India too, prices of domestic natural gas have been revised upwards 62% after Goldman Sachs upped its forecast for benchmark crude oil. This will also have a trickle-down effect, with rising electricity tariffs from gas-fuelled power projects and push up the cost of production for the fertiliser sector.

India imports an estimated 95 million metric standard cubic meter per day (MMSCMD) of LNG every day, half of which is used by State and private refineries to generate grey hydrogen in refineries. The fertiliser industry is another large consumer. But grey hydrogen produced from 'reforming' gas contributes majorly to emissions. So, it is crucial for refiners to pivot first and offer scale. It's easier too. Hydrogen is the smallest component of the cost economics of a refinery at only 4%, versus about 80% for fertiliser.

If a refinery like RIL's Jamnagar starts using green hydrogen, it could lead to about 10 GW of renewable capacity addition, with a potential $15 billion (₹1.13 lakh crore) investment. It will also be equivalent to the entire public transport network of Gujarat moving to EV.

Likewise, if IOC's Mathura refinery or HPCL's Mumbai unit follows suit, respective state or city public transport can change forever. Public transport in India is still the backbone for commuters who can't overnight switch to expensive but greener private 2- or 4-wheelers. Much to everyone's surprise, State-run NTPC, the poster boy of dirty coal, has seized on this opportunity, outlining plans to radically migrate towards a 60 GW cleaner, greener power- generation goal. The onus, therefore, is now on refiners.

One can argue that this transition from grey to green will have some bearing on refining margins initially. But long term, it will lead to savings. More importantly, the implication towards climate change far outweighs some of these commercial benefits. After investing about $15 billion in the last decade to boost profits from its legacy refining and petrochemicals businesses, which generates nearly 60% of its $73

billion (₹5.48 lakh crore) annual revenue, RIL is now ready to spend $10 billion (₹75,000 crore) in the next few years to produce clean energy. The Adani Group's plans are doubly ambitious.

These days, money is chasing those who are conscious of the environment, and shun those who aren't. The purchase obligation is a small step towards a cleaner future and sustainable energy security. Support, not scuttle, it.